शिमला मिर्च व लाल मिर्च के प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

मीनू गुप्ता[1] और नरेंद्र भारत[2]

[1]सहायक वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान विभाग,
[2]प्रधान वैज्ञानिक, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन

शिमला मिर्च तथा लाल मिर्च हिमाचल प्रदेश में मुख्य नकदी फसलें हैं । इनके फलों में विटामिन ए और एस्कॉर्बिक एसिड प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । इनकी उत्पति मेक्सिको में हुई तथा पुर्तगाली इन्हें एशिया लाये । भारत में इन्हें देश के सभी राज्यों में उगाया जाता है । इस फसल को कई प्रकार के फफूंद, जीवाणु और विषाणु संक्रमित करते हैं जिससे इनके उत्पादन में बहुत कमी हो जाती है । विभिन्न रोगों का विवरण निम्नलिखित है:

अ) फफूंद जनित रोग

1. कमर तोड़

यह नर्सरी का प्रमुख रोग है ।

लक्षण: यह दो रूपों में प्रकट होता है ।

अ) उत्थान से पूर्व कमर तोड़
ब) उत्थान के बाद कमर तोड़

अ) उत्थान से पूर्व कमर तोड़

इस अवस्था में पौध मिट्टी से निकल ही नहीं पाती । इसका कारण बीज का सड़ना अथवा पौध का मिट्टी के अन्दर मर जाना है । इसके अतिरिक्त नर्सरी में पौध असमान रूप से दिखाई देती है ।

ब) उत्थान के बाद कमर तोड़

इस अवस्था में संक्रमित पौध लगने के बाद लुढ़क जाती है । शुरू में संक्रमित उत्तक पानी से भरे हुए दिखाई देते हैं और नर्म हो जाते हैं । बाद में यह रोग सामान्यत: एक स्थान से शुरू

उत्थान से पूर्व कमर तोड़

होता है तथा उस जगह के आसपास सभी पौधे मर जाते हैं ।

रोगकारक

मिट्टी में रहने वाले फफूंद जैसेकि पीथियम एफेनिडरमेटम, पीथियम बटलरी, पीथियम इनफलेटम, फाइटोफ्थोरा पैरासिटीका, फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम, फ्यूजेरियम सोलेनाई, फोमोप्सिस वैक्सन, कोलिटोट्राइकम कैप्सिसी, राइजोकटोनिया सोलेनाई और स्कलेरोशियम रोलफसाई आदि इस रोग के प्रमुख कारक हैं ।

उत्थान के बाद कमर तोड़

इनमें से पीथियम एफेनिडरमेटम तथा पीथियम बटलरी मुख्य रूप से पाई जाने वाली प्रजातियां हैं । पीथियम का कवकजाल पौधे के उत्तकों को अन्दर तक संक्रमित कर देता है ।

रोग चक्र

ये रोगकारक बीज अथवा मिट्टी में विद्यमान होते हैं । इनमें से मुख्य पीथियम है जोकि एक ऋतु से दूसरी ऋतु तक पौधे के अवशेषों अथवा मिट्टी में जीवित रहते हैं तथा उपयुक्त वातावरण मिलने पर पौध को मिट्टी की सतह के नीचे अथवा तने पर संक्रमित करते हैं ।

इस के अतिरिक्त राइजोकटोनिया सोलेनाई मिट्टी में स्कलेरोशिया बना कर जीवित रहता है जो अनुकूल वातावरण में कवकजाल बना कर नर्सरी में पौध को संक्रमित करते हैं । यह फफूंद मिट्टी में कई वर्षों तक जीवित रह सकता है । फ्यूजेरियम की प्रजातियाँ भी मिट्टी में ही मौजूद होती हैं और ये क्लेमाइडोस्पोर बना कर जीवित रहती हैं । अनुकूल तापमान और नमी मिलने पर ये पौध को संक्रमित करते हैं ।

इस रोग के लिए मिट्टी में अत्यधिक नमी, पी एच मान 6.0 तथा चिकनी मिट्टी सहायक होते हैं । उत्थान से पूर्व कमर तोड़ का प्रकोप $20\text{-}25^{0}$ सै. तापमान पर अत्यधिक होता है जबकि उत्थान के बाद कमर तोड़ $30\text{-}40^{0}$ सै. पर अधिक उग्र होता है।

रोग नियंत्रण

1. नर्सरी को हर वर्ष एक ही जगह पर नहीं लगाना चाहिए ।

2. सौर उर्जा से पौधशाला की भूमि को रोगाणु रहित करने के लिए गर्मियों के दिनों में पारदर्शी पोलीथीन की चादर (25 माइक्रोन) का प्रयोग कर सकते हैं। अन्यथा मिट्टी को फोर्मलिन (5 प्रतिशत) से कम से कम 21 दिन पहले संशोधित कर सकते हैं या जैविक फफूंदनाशकों जैसेकि ट्राइकोडर्मा हरजिएनम/ ट्राइकोडर्मा विरिडी (40 ग्राम/मीटर^{2}) को भी मिट्टी में मिला सकते हैं।

3.बीज को केपटान या थिरम (3 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज) से उपचारित करें।

4. बीज के मिट्टी से उगने के बाद नर्सरी में मैन्कोजेब (25 ग्राम) + कार्बेन्डाजिम (10 ग्राम) के मिश्रण को प्रति 10 लीटर पानी में घोल बना कर सिंचाई करें ।

5. हल्की तथा बार बार सिंचाई करें ।

2. डाई बैक तथा एन्थ्राक्नो ज़ या राइप रोट

यह लाल मिर्च तथा शिमला मिर्च की बीज फसल में लगने वाली बहुत ही गंभीर बीमारी है ।

लक्षण: इस रोग के लक्षण दो अवस्थाओं में प्रकट होते हैं ।

डाई बैक

अ) **डाई बैक:** रोगग्रस्त टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखने लगती हैं। धीरे धीरे पूरी शाखा या टहनी ही सूख जाती है । रोग की अग्रिम अवस्था में शाखा हलके भूरे रंग की हो जाती है । इस सूखे हुए भाग पर काफी मात्रा में काले रंग के छोटे छोटे बिंदु दिखाई देते हैं जोकि फफूंद के एसरवुलाई होते हैं । आम तौर पर ऊपर की तथा कुछ किनारे वाली शाखाएँ सूखती हैं परन्तु अधिक संक्रमण में पूरा पौधा ही सूख जाता है ।

एन्थ्राक्नोज़ या राइप रोट

ब) **एन्थ्राक्नोज़ या राइप रोट:** इस रोग के लक्षण लाल पके हुए फलों पर दिखाई देते हैं । परन्तु हरे फलों पर भी कई बार संक्रमण हो जाता है । इस के लक्षण फल की सतह पर छोटे, काले, गोल तथा थोड़े से दबे हुए धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जोकि धुरी की दिशा में बढ़ते हैं। जैसे जैसे फल पकने लगता है ये धब्बे बढ़ कर आपस में मिल जाते हैं और भूरे से काले रंग के हो जाते हैं। बाहरी सतह पर संक्रमण के बाद फफूंद बीज को भी संक्रमित कर देती है । संक्रमित बीज हलके भूरे रंग के होकर सिकुड़ जाते हैं ।

रोगकारक

यह रोग कोलिटोट्राइकम कैप्सिसी नामक फफूंद द्वारा होता है ।

रोग चक्र

यह फफूंद दोनों संक्रमित पौधे के अवशेषों तथा बीज में जीवित रहता है । मिट्टी में यह रोगकारक कम से कम नौ महीनों तक जीवित रह सकता है जिससे सबसे पहले संक्रमण होता है।

बाद में बीजाणु हवा द्वारा फैलाये जाते हैं ।

इस रोग के लिए 28 ^{0} सै. तापमान और अत्यधिक 100 प्रतिशत नमी या आर्द्रता उपयुक्त है ।

रोग नियंत्रण

1 संक्रमित पौधे के अवशेषों को इकठ्ठा करके जला दें ।

2 उन खरपतवारों को निकाल कर नष्ट कर दें जिन पर यह रोग कारक जीवित रह सकता है ।

3 बीज स्वस्थ फलों से ही लें ।

4 बीज को कैप्टान (3 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज) से उपचारित करें ।

5 फसल पर मानसून से पहले कार्बेन्डाजिम (10 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) या थायोफनेट मिथाइल (10 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) या मैन्कोजेब + कार्बेन्डाजिम के मिश्रण (25 ग्राम + 10 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करें तथा 10-14 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

3. पत्ता झुलसा और फल सड़न

यह रोग उन क्षेत्रों में अधिक महत्त्वपूर्ण है जहाँ फल लगना वर्षा ऋतु में आरम्भ होता है।

लक्षण: इस रोग के लक्षण पत्तों पर पनीले धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं तथा पत्ते शीघ्र ही झ ड़ जाते हैं । फलों पर भी इसी प्रकार के पनीले धब्बे बनते हैं तथा फल नर्म हो जाता है और स्वस्थ और संक्रमित भाग में एक साफ़ विभाजन रेखा दिखाई देती है ।आर्द्र मौसम में सड़े हुए फलों पर सफ़ेद रंग का फफूंद का कवकजाल दिखाई देता है । पूरी तरह से सड़े हुए फल जमीन पर गिर जाते हैं । इस रोग के लक्षण पौधों में तने पर भी पनीले धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जोकि तने को भूमि रेखा पर पूरी तरह से घेर लेते हैं । यह सड़न नीचे की ओर ज ड़ों तक चली जाती है तथा पत्ते एकाएक मुरझा जाते हैं ।

पत्ता झुलसा

फल सड़न

रोगकारक

इस रोग में फाइटोफ्थोरा की दो प्रजातियाँ फाइटोफ्थोरा कैप्सिसी तथा

फाइटोफ्थोरा निकोशियानी प्रजाति निकोशियानी पाई गयी हैं ।

रोग चक्र

ये रोगकारक मिट्टी में तथा बीज में ऊस्पोर बनाकर जीवित रहते हैं । अधिक मात्रा में वर्षा तथा आर्द्रता और गर्म जलवायु इस रोग के संक्रमण के लिए सहायक हैं । अत्यधिक वर्षा इस रोग के फैलने में सहायता करती है तथा फफूंद के बीजाणु वर्षा के छींटों द्वारा फैलते हैं । इसके अतिरिक्त बीजाणु हवा द्वारा भी स्वस्थ फलों और पत्तों तक पहुंचाए जाते हैं। इस रोग के विकास के लिए 22 - 25 ° सै. तापमान तथा 80 प्रतिशत से अधिक आर्द्रता लाभदायक हैं ।

नियंत्रण

1 रोगमुक्त बीज और पौध लगायें ।

2 संक्रमित फलों और पत्तों को समय समय पर निकल कर नष्ट कर दें ।

3 खेतों में पानी न खड़ा होने दें।

4 वर्षा ऋतु आरम्भ होने से पहले खेत में चीड़ की पत्तियों या घास का बिछौना बिछाएं ।

5 वर्षा ऋतु के आरम्भ होते ही मेटालेक्जिल + मैन्कोजेब के मिश्रण (25 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का छिडकाव करें । बाद में बोर्डो मिश्रण (800 ग्राम नीला थोथा + 800 ग्राम अनबूझा चूना + 100 लीटर पानी) या कॉपर ओक्सीक्लोराइड (30 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का 8-10 दिन के अंतराल पर छिडकाव करें ।

4. सरकोस्पोरा पत्ता धब्बा

लक्षण: इस रोग के लक्षण पत्तों पर गोलाकार, हल्के रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैंजिनके किनारे भूरे रंग के होते हैं तथा ये मेंढक की आंख की तरह होते हैं । जब पत्तों पर बहुत सारे धब्बे बन जाते हैं तो ये पत्ते पीले होकर समय से पहले ही झड जाते हैं । इसके लक्षण तने तथा शाखाओं पर लम्बे अथवा अव्यवस्थित धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं । यह फलों को भी संक्रमित करता है ।

सरकोस्पोरा पत्ता धब्बा

रोगकारक

यह रोग सरकोस्पोरा कैप्सिसी नामक फफूंद द्वारा होता है ।

रोग चक्र

यह रोग मुख्यत : संक्रमित पौधे के अवशेषों में कवकजाल के रूप में जीवित रहता है । जिन क्षेत्रों में फलों पर संक्रमण होता है वहां यह संक्रमित बीज में भी जीवित रहता है । ये फफूंद के बीजाणु ही नई फसल को संक्रमित

करते हैं । ये बीजाणु हवा या वर्षा के छीटों द्वारा फैलाये जाते हैं और संक्रमण करते हैं । रोग का विकास अधिक नमी (>95%) और 20 -25^0 सै. तापमान पर सर्वोत्तम होता है ।

रोग नियंत्रण

1 संक्रमित पौधे के अवशेषों को इकट्ठा करके जला दें।

2 फसल चक्र अपनाएं तथा खेतों में पानी न खड़ा रहने दें।

3 स्वस्थ बीज का प्रयोग करें तथा बीज को कैप्तान (3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचारित करें ।

4 फसल पर कार्बेन्डाजिम (10 ग्रामप्रति 10 लीटर पानी) या थायोफनेट मिथाइल (10 ग्रामप्रति 10 लीटर पानी) या मैन्कोजेब + कार्बेन्डाजिम के मिश्रण (25 ग्राम + 10 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) या डाएफेनकोनाजोल (3 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का छि ड़काव करें तथा 10 - 14 दिन के अंतराल पर पुनः करें ।

5 चूर्णसिता रोग

यह रोग हरित गृहों का प्रमुख रोग है ।

लक्षण: पत्ते की निचली सतह पर सफ़ेद से हल्के स्लेटी रंग के धब्बे बन जाते हैं जबकि उनके ऊपरी भाग पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं जोकि मध्य से भूरे रंग के होते हैं । संक्रमित पत्ते ऊपर की और मुड़ जाते हैं तथा समय से पहले ही झड़ जाते हैं । अत्यधिक संक्रमण में टहनियां और शाखाएं ऊपर से नीचे की और मर जाती हैं और पौधे छोटे रह जाते हैं ।अंततः फल भी झड़ जाते हैं ।

पत्ते की निचली सतह पर सफ़ेद धब्बे

पत्ते पर सफ़ेद रंग की फफूंद की वृद्धि

पत्ते के ऊपरी भाग पर पीले धब्बे

रोगकारक

फफूंद लेवील्युला टौरिका (अपूर्ण अवस्था-ओइडीयोप्सिस सिक्युला/टौरिका) इस रोग का कारक है ।

ऊपर की ओर मुड़ा पत्ता

रोग चक्र

यह रोगकारक कई प्रकार के पौधों को संक्रमित करता है तथा इस प्रकार एक ऋतु से दूसरी ऋतु तक जीवित रहता है । इसके बीजाणु 25-30°सै. तापमान पर अंकुरित होते हैं । रात के समय अधिक आर्द्रता तथा 30°सै. से अधिक तापमान इसके लिए सहायक है । कम नमी इस रोग को फ़ैलाने में सहायता करती है ।

रोग नियंत्रण

1 पौधों में अधिक दूरी, स्प्रिंकलर द्वारा सिंचाई और हरित गृहों में मिस्टिंग तथा हवा का उचित प्रवाह इस रोग को नियंत्रित करने में सहायक हैं ।

2 रोग के लक्षण देखते ही फसल पर फफूंदनाशकों जैसेकि हेक्साकोनाजोल (5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) या कार्बेनडाजिम (10 ग्रामप्रति 10 लीटर पानी) या थायोफनेट मिथाइल (10 ग्रामप्रति 10 लीटर पानी) का छिडकाव करें तथा 10- 14 दिन के अंतराल पर पुनः करें ।

ब) जीवाणु जनित रोग

1 बैक्टिरियल स्पॉट

लक्षण: पत्तों पर शुरू में इस रोग के लक्षण पनीले गोलाकार धब्बे होते हैं जो मध्य में भूरे रंग के तथा किनारे पर पीले रंग के होते हैं । ये धब्बे ऊपरी सतह पर दबे हुए तथा निचली सतह पर उभरे हुए होते हैं । अनुकूल वातावरण में ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं और पत्ते झुलसे हुए दिखाई देते हैं । ऐसे पत्ते पीले होकर पहले ही गिर जाते हैं । तने पर ये धब्बे तंग, लम्बे और उभरे हुए होते हैं। फलों पर शुरू में हरे धब्बे बनते हैं जोकि फ़ैल जाते हैं और बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं । ये धब्बे उभरे हुए कठोर तथा गाँठ की तरह दिखाई देते हैं । अधिक नमी में धब्बे के पास से फल सड़ने लगता है ।

संक्रमित पत्ता

रोगकारक

यह रोग जीवाणु जेंथोमोनस कैम्पेसत्रिस प्रजाति वेसीकेटोरिया द्वारा होता है ।

संक्रमित फल

रोग चक्र

यह जीवाणु संक्रमित बीज तथा पौधे के अवशेषों में विद्यमान रहता है । मध्यम तापमान, अधिक वर्षा और आर्द्रता इस रोग के लिए अनुकूल हैं । पौधे में संक्रमण 15-35 °सै. तापमान पर हो सकता है जबकि अनुकूल तापमान 22-34° सै. तक होता है । इस रोग का अधिक प्रकोप जुलाई - सितम्बर में अधिक होता है । खेत में यह जीवाणु हवा द्वारा प्रवाहित बारिश की बूंदों द्वारा या शाखाओं को काटने से फैलाया जाता है ।

रोग नियंत्रण

1 खेत में पानी न रहने दें ।
2 फसल चक्र अपनाएं ।
3 स्वस्थ बीज तथा पौध का प्रयोग करें।
4 बीज को स्ट्रेप्तोसाइक्लीन (1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी)से 30 मिनट के लिए उपचारित करें ।
5 रोग के लक्षण देखते ही फसल पर स्ट्रेप्तोसाइकलिन (1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करें ।

2 बैक्टिरियल विल्ट

लक्षण: शुरू में इस रोग के लक्षण पत्तों पर दिखाई देते हैं । दिन में ऊपर की टहनियों के पत्ते मुरझाने लगते हैं । इस अवस्था में केवल एक ही शाखा मुरझाती है तथा रात में वह स्वस्थ लगती है। जैसे ही अनुकूल वातावरण में

मुरझाए हुए पौधे के हरे पत्ते

रोग का प्रकोप बढ़ता है, पूरा पौधा अचानक ही मुरझा जाता है और रंग के ही रहते हैं । रोगग्रस्त पौधों के संवहन उत्तक भूरे रंग के हो जाते हैं । रोगग्रस्त तने को काट कर पानी में रखने से दुधिया रंग का जीवाणुओं का स्राव निकलने लगता है, जिसे ऊज कहते हैं। फूल आने की अवस्था में पत्तों का अचानक मुरझा जाना इसके मुख्य लक्षण हैं जिससे काफी हानि होती है ।

रोग कारक

इस रोग का कारक राल्सटोनिया सोलेनेसिएरम नामक जीवाणु है ।

रोग चक्र

ये जीवाणु मिट्टी में रहते हैं । इस रोग के लिए 28-36° सै. तथा 50-100 प्रतिशत नमी अनुकूल है तथा इस वातावरण में इसका प्रकोप बढ़ जाता है।

रोग नियंत्रण

1 दो वर्षीय फसल चक्र में अनाज वाली फसलें जैसे मक्का, रागी और भिन्डी आदि लगाने से इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है ।

2 खेत में जल के निकास का उचित प्रबंध करें ।

3 खरपतवारों और जीवाणुओं को संरक्षण देने वाले अन्य पौधों को नष्ट कर दें ।

4 पौधारोपण से पहले पौध को स्ट्रेप्तोसाइकलिन (1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) के घोल में 30 मिनट के लिए उपचारित करने से भी इस रोग को कम कर सकते हैं ।

स) विषाणु जनित रोग

1 मोजैक

लक्षण: इस रोग में कई प्रकार की मोजैक पद्धतियाँ बनती हैं जोकि विषाणु की प्रकार पर निर्भर करती हैं । पोटैटो वायरस वाई और इस की प्रजातियाँ आमतौर पर शिराओं और तने का सड़न करते हैं । पेपर वीनल मोटल वायरस भी मोजैक, मोटलिंग करता है तथा पत्तों के मुड़ने और धागे की तरह होने से संक्रमित पौधे झा ड़ी की तरह लगता है । कुकुम्बर मोजैक वायरस भी मोजैक, मोटलिंग के लक्षण तथा पत्ते के आकार में कमी करता है ।

रोगकारक

कई विषाणु जैसेकि पोटैटो वायरस वाई और इस की प्रजातियाँ, कुकुम्बर मोजैक वायरस, टोबैको मोजैक वायरस, टोमेटो एच वायरस, पेपर वीन बेनडिंग वायरस, पेपर वीनल मोटल वायरस, पेपर सिवीयर मोजैक वायरस और चिल्ली मोजैक वायरस इस फसल में मोजैक के लक्षण उत्पन्न करते हैं ।

मोजैक

रोग चक्र

सभी विषाणु सैप द्वारा फैलाये जाते हैं । टोबैको मोजैकवायरस के अतिरिक्त सभी तैले द्वारा एक पौधे से दूसरे पौधे तक पहुंचाए जाते हैं । प्रमुख तैलीय वाहकों में माइजस परसिकी, एफ़ीस गोस्सिपी और एफ़ीस क्रासीवोरा आदि हैं जो कि इन विषाणुओं को संचारित करते हैं ।

2. लीफ कर्ल

लक्षण: इस रोग में पत्ते मु ड़ जाते हैं जिस से उनके आकर में कमी आ जाती है जोकि बाद में पीले हो जाते हैं । पुराने पत्ते सख्त हो जाते हैं । प्रभावित पौधे छोटे रह जाते हैं। फल भी आकार में छोटे रह जाते हैं ।

लीफ कर्ल लक्षण

रोगकारक

टोबैको लीफ कर्ल वायरस इस रोग का कारक है ।

रोग चक्र

यह विषाणु एक ऋतु से दूसरी ऋतु तक अन्य पौधों पर जीवित रहता है और यह सफ़ेद मक्खी (बेमिसिया टबेसाइ) द्वारा संचारित होता है ।यह रोग वाहक की उपस्थिति, विषाणु की मात्रा, वाहक की क्रिया और उन की जनसंख्या और वातावरण पर निर्भर करता है। वर्षा के बाद, इस रोग का संक्रमण वाहक की क्रिया कम होने के कारण कम हो जाता है।

रोग नियंत्रण

1. कुछ किस्में जैसे कि पंजाब लाल, पैरीनियल और गुहाटी ब्लैक विषाणु रोगों के लिए प्रतिरोधी हैं।

2. मक्की की फसल को किनारे पर लगाने से भी विषाणु रोगों का संक्रमण कम हो जाता है।

3. पीली ट्रैप और कीटनाशकों के छिडकाव से भी वाहक की संख्या को कम किया जा सकता है।